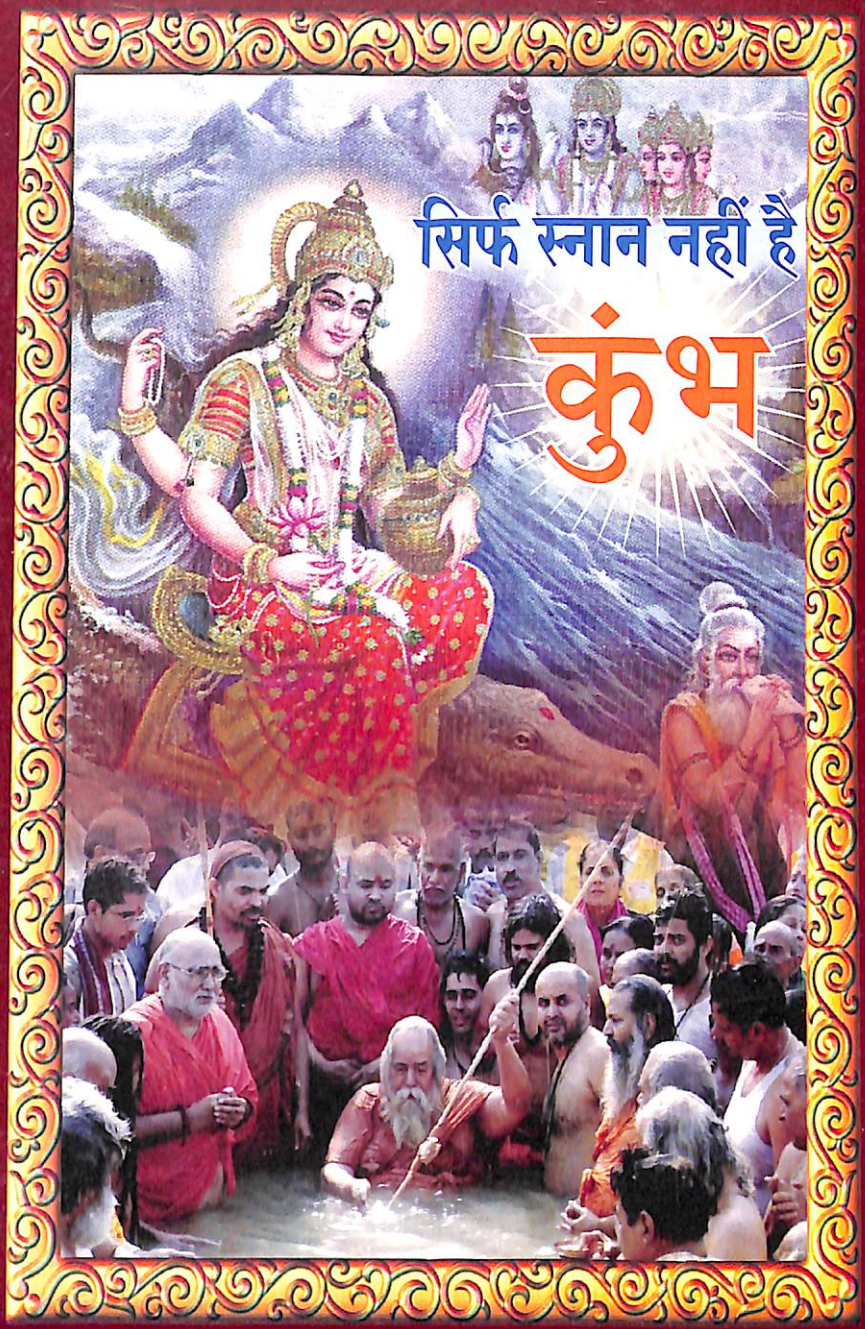

राजेंद्र सिंह

संयोजक • गङ्गा सेवा अभियान

॥ जहं-जहं कुंभ जगे जग जागे
तहं-तहं नदी पावनी लागे ॥

सिर्फ स्नान नहीं है
कुंभ

सदानन्दः सरस्वती
शारदापीठम्, द्वारका

गाङ्गं जलं निर्मलम्

पयसः सर्वं प्रवर्तते । अतएव प्रार्थयामहे-पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः, पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् । अतएव आदौ अपामुत्पत्तिः श्रूयते-अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजत् । अस्माकं भगवान् नारायणो भवति । अम्भसां मध्य एव विराजते। तदनुग्रहेणास्माकं वर्षे भारते स्रोतस्विन्यः बह्व्यः प्रभूतेनाम्भसा जीवयन्त्यः पावयन्त्यश्च जीवजातान् आवर्षं प्रवहन्ति । तासु गंगा राराजीति गुणैः स्वीयैः माधुर्यादिभिः । सैवास्माकं जीवनदायिनी सम्प्रति दूषितेति दूयते नश्चेतः । राज्ञः सगरस्य पुत्रेभ्यः निःश्रेयसप्रदायिनी, भगीरथस्य यशसः विस्तारिणी, गौरवभूता भारतभूमेः गंगा यथापूर्वं सर्वप्रदूषणविमुक्ता विमुक्ता च सर्वबन्धनेभ्यः, मोचयन्ती सर्वदुःखेभ्यः देशवासिन इमानासूर्यचन्द्रतारकमेवमेव प्रस्तुता स्यादिति हेतोः पूज्यपादानां ज्योतिश्शारदापीठाधीश्वराणां जगद्गुरुशङ्कराचार्यश्रीस्वरूपानन्दसरस्वतीस्वामिपादानां निदेशे स्थितेन श्रीराजेन्द्र सिंह महाभागेन 'गंगा सेवा अभियान' अभिधानेन, आचार्यचरणैः प्रदत्तेन उपक्रान्तमस्ति । तस्यास्योपक्रमस्य सम्पत्तिं सर्वतोमुखीं अर्थयामहे भगवन्तं श्रीद्वारकाधीशं, श्रीचन्द्रमौलीश्वरं चेति शम् ।

(सदानन्दः सरस्वती)
शारदापीठम्, द्वारका

लेखक • राजेंद्र सिंह
सम्पादक • अरुण तिवारी

प्रकाशक- राष्ट्रीय जल बिरादरी, जयपुर
द्वितीय संस्करण- सितम्बर 2008 • सहयोग राशि-रुपये 20/-

जल बिरादरी
गंगा सेवा अभियान

संदेश

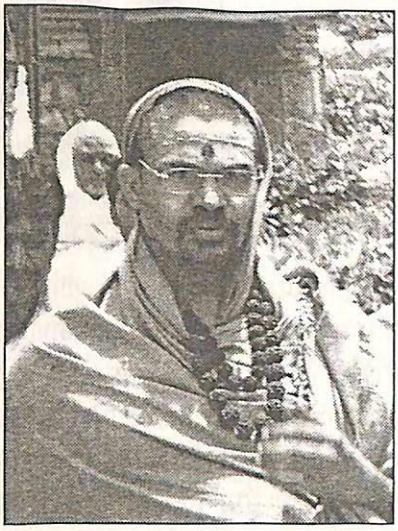

अमृत..... यानि जो मृत न हो। ऐसे जीवंत जल को राक्षसी प्रवृत्ति से बचाने के लिए कभी दैवीय शक्तियों ने जान की बाजी लगाई। इसी से गंगा अमृतमयी हुई और यह अमृतमयी बनी रहे, इसके लिए कुंभ लगे। आज एक नहीं, ऐसी ही जाने कितनी अमृतमयी धाराओं पर राक्षसी प्रवृत्ति का कब्जा है। गंगा इनका प्रतीक है। गंगा भी अब शोषण– प्रदूषण– अतिक्रमण के राक्षसों से घिर गई है। गंगा की आध्यात्मिक, जीवनदायनी और प्रदूषणनाशक शक्ति जाने कहां चली गई! यह हमारा ही अपराध है कि गंगा जल की जिन बूंदों को मृत्यु और जन्म के समय मुँह में डालने की लालसा सभी को होती है, लेकिन आज गंगा स्नान करने लायक तो दूर, आचमन करने योग्य भी नहीं बची है। राष्ट्रीय संरक्षण में हासिल किये बगैर अब गंगा बचने वाली नहीं। अब राष्ट्रीय नदी प्रतीक के रूप में गंगा को संवैधानिक मान्यता संरक्षण जरूरी है। अतः 'गंगा सेवा अभियान' अब विशाल भारत की सभी सकारात्मक शक्तियों को पुनः जोड़कर गंगा को 'अ–मृतधारा' बनाने को कृत संकल्प है। गंगा को जीवंत बनाये बगैर भारत की संस्कृति और समृद्धि ज्यादा दिन टिक नहीं सकती। श्री राजेन्द्र सिंह द्वारा रचित यह पुस्तिका गंगा को जीवंत बनाये रखने की दिशा में आगे बढ़ा एक कदम है। यह आह्वान है सभी भारतवासियों के लिए कि आप जागें!..... एकजुट हों और मां गंगा को उसका अमृतमयी प्रवाह वापस लौटायें। आइए! गंगा संरक्षण हेतु कुम्भ के मूल विचार के प्रति संकल्पबद्ध हों। शुभाशीष!

स्वामी अविमुक्तेश्वरानन्द सरस्वती

निवेदन

मुझे यह पुस्तक लिखने की प्रेरणा गंगा दशहरा की शुभ तिथि पर मेरी उत्तरकाशी यात्रा के दौरान हुई। यूं भारत की नदियों की दिन–ब–दिन होती दुर्दशा के बावजूद मेरे मन में यह विश्वास सदा रहा कि ऐसा हो नहीं सकता कि भारत जैसा महान देश अपनी नदियों के प्रबन्धन के लिए हमेशा से ही ऐसा विमुख रहा हो। मैं पिछले 8–10 वर्षों से दुनिया के कई नदी उत्सवों में गया..... स्वीडन की स्टॉकहोम नदी, ऑस्ट्रेलिया की ब्रिस्बेन, अमेरिका की हडसन और कनाडा की ओटावा नदी से सम्बन्धित नदी उत्सवों को देखकर भी मेरे मन में भारत के नदी उत्सवों को ठीक से जानने की जिज्ञासा जागी।

इस जिज्ञासा ने मुझे जगह–जगह से ज्ञान पाने को प्रोत्साहित किया। इस जिज्ञासा और प्रोत्साहन के जरिये 'कुंभ' के रूप में मुझे भारत में हजारों साल पुराने नदी प्रबन्धन का एक अदभुत सूत्र हाथ लग गया। सचमुच! कुंभ कुछ और नहीं..... बल्कि भारत में नदी प्रबन्धन की नीति–रीति और समाधान हासिल करने की एक सतत व्यवस्था का ही नाम है। कुंभ का इतना वैज्ञानिक और इतना तार्किक व्यवहार जानकर मैं खुद आश्चर्यचकित हूं। यह मेरा दायित्व है कि मैं नदी प्रबन्धन के इस अद्भुत भारतीय सूत्र को आप तक पहुंचाऊं।

इसी निमित्त 'सिर्फ स्नान नहीं है कुंभ' पुस्तक आपके हाथों में है। इसे इस रूप में आप तक पहुंचाने में श्री अरुण तिवारी के सम्पादन की भूमिका महत्वपूर्ण है। परमपूज्य जगद्गुरू शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती, स्वामी श्री अविमुक्तेश्वरानन्द सरस्वती और स्वामी श्री सदानन्द सरस्वती जी ने इस पुस्तिका को पढ़कर जिस भाव से अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। मैं सभी का आभारी हूं। मेरी प्रार्थना है कि यदि यह पुस्तिका पढ़कर अपनी नदी व समाज को बचाने का एक भी सकारात्मक संकल्प आपके मन में जागे, तो उसे कार्य रूप अवश्य दें। बस इतना ही! आभार!!

आपका राजेन्द्र सिंह

आइए ! कुंभ को जानें

जब श्री राजेन्द्र भाई ने इस पुस्तिका का संपादन करने का दायित्व मुझे सौंपा, तब तक मैं भी 'कुम्भ' को सिर्फ स्नान का पर्व मानता था। जानकारी भी बस! इतनी ही थी, जितना आस्था ने बताया। कुंभ के कथानक को ग्रंथों में पढ़ने का अवसर कई बार मिला, लेकिन राजा, प्रजा, और ऋषि जहां एक साथ बैठकर साझे भविष्य की कल्पना में रंग भरते हों....रास्ते बनाते हों; सकारात्मक शक्तियों द्वारा नकारात्मक शक्तियों और गतिविधियों पर रोक की कोशिश जहां भी हो, वहीं 'कुम्भ' है। यह आकलन....यह दृष्टि मेरे मानस में कभी नहीं उपजी। इसके लिए लेखक धन्यवाद व आभार का पात्र है। अब मुझे सचमुच लगता है कि यदि हमें मृत्यु शैया पर पड़ी अपनी मां सरीखी नदियों को पुनर्जीवित करना है; नदी व अपनी .....दोनों की समृद्धि हासिल करनी है, तो हमें इस दायित्व पूर्ति के लिए कुंभ के मूल अभिप्राय व भावना की ओर वापस लौटना ही होगा।

यह छोटी सी पुस्तिका हमें भारत की महान परम्पराओं से सीखकर अपने मन-मानस को अपनी नदियों से जोड़ने का एक छोटा सा निवेदन है। सच कहूं, तो कुंभ में स्नान का हक भारत के परम्परागत समाज ने सिर्फ उन्हें ही दिया था, जो जल शुद्धि को अपना व्यवहार बनायें, नदी धाराओं को शुद्ध-सदानीरा बनाने के लिए एकजुट हों, संवाद करें, मार्ग तलाशें और अपनी नदियों को सचमुच भारत का राष्ट्रीय गौरव बना सकें। सोचिए! क्या कुंभ में स्नान का हक आपको है ? यदि नहीं..... तो यह पुस्तिका आपके लिए है। यह पुस्तिका उनके लिए भी है, जिनके मन में भारत की नदियों को इनका राष्ट्रीय गौरव लौटाने के इस महायज्ञ में तनिक भी योगदान करने की इच्छा जगती है ?

संपादक

कुंभ क्या और क्यों ?

भारत में कुंभ का एक गौरवशाली इतिहास रहा है। छः बरस में अर्धकुंभ, 12 में कुंभ और 144 बरस में महाकुंभ ! जाति, धर्म, अमीरी-गरीबी..... यहां तक कि राष्ट्र की सरहदें भी इस आयोजन में कोई मायने नहीं रखतीं। साधु-संत-राज-समाज-देशी-विदेशी.... सभी इस आयोजन में आकर खो जाते हैं। कुंभ में आकर ऐसा लगता है कि जैसे हम कभी भिन्न थे ही नहीं। दुनिया में पानी का इतना बड़ा मेला मैंने कहीं नहीं देखा। यह सिलसिला हजारों बरस से बदस्तूर जारी है। ये सभी मुझे आश्चर्यचकित भी करता है और मन में सवाल भी उठाता है।

मन में जिज्ञासा उठती है कि क्या कुंभ नदी में एक डुबकी स्नान कर लेने की मात्र आस्था का आयोजन है अथवा इसकी पृष्ठभूमि में कुछ और प्रयोजन थे ? आखिर नदी किनारे ही हमारे ज्यादातर मठ, मंदिर, तीर्थ और धर्माचार्यों के ठिकाने क्यों बने ? कुंभ, अर्धकुंभ और महाकुंभ की नामावली व समयबद्धता का आधार क्या रहा होगा ? यदि कुंभ का प्रयोजन स्नान मात्र ही हो, तो फिर कल्पवासी यहां महीनों कल्पवास क्यों करते हैं ? स्नान का इतना बड़ा आयोजन क्यूं ? ऐसे जाने कितने ही सवाल मन में उठते हैं।

कुंभ की आस्था

आस्था से पूछता हूं, तो जवाब आता है कि 'घट' कुंभ का प्रतीक है। 'घट' यानी घड़ा.... कलश। आपने कुंभ राशि के प्रतीक चिह्न के रूप में कलश को देखा होगा। आस्था कहती है कि समुन्द्र मंथन के दौरान निकले अमृत कलश को लेकर राक्षसों से बचाने के लिए देवता जब 12 दिन तक ब्रह्माण्ड में इसे छिपाने की कोशिश करते रहे। इस दौरान जिन-जिन स्थानों पर उन्होंने अमृत कलश को भूमि पर रखा, वे स्थान कुंभ आयोजन के स्थान हो गये।

गर्ग संहिता आदि पुराणों ने यह उल्लेख किया तो अथर्ववेद कहता है कि समुन्द्र मंथन के समय अमृत से पूर्ण कुंभ जहां-जहां स्थापित किया गया, वे चार स्थान कुंभ के

तीर्थ हो गये। अन्य पुराण बारह वर्षों में सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति के योगायोग के चार प्रभाव बिन्दुओं को कुंभ का स्थान मानते हैं। नासिक (महाराष्ट्र) में गोदावरी नदी का किनारा, उज्जैन (मध्यप्रदेश) में शिप्रा तट पर, इलाहाबाद और हरिद्वार में गंगा का तट..... ये आज भी कुंभ का स्थान बने हुए हैं। आस्था कहती है कि दैवीय शक्तियां कुंभ को लेकर बारह दिन तक चक्कर लगाती रहीं। उनका एक दिव्य दिवस मृत्यु लोक के एक वर्ष के बराबर होता है। अतः बारह दिव्य दिवस मानव गणना के बारह वर्ष हो गये और इन बारह वर्षों के अन्तराल को दो कुंभ के बीच का अंतराल मान लिया गया।

कुंभ का विज्ञान

विश्व को ब्रह्माण्ड रूप भरा हुआ कुंभ ही कहा गया। वैज्ञानिक इसी से दिन, रात, महीना और बारह महीनों का एक वर्ष की गणना करते हैं। पृथ्वी एक दिन में एक बार अपनी धुरी पर और बारह महीनों में एक बार सूर्य की परिक्रमा पूरा करती है। यह हम सभी जानते ही हैं। भारत के ऋषि वैज्ञानिक तर्क देते हैं कि ब्रह्माण्ड में ऑक्सीजन प्रधान और कार्बन-डाइ-आक्साइड प्रधान दोनों प्रकार के पिंड हैं। ऑक्सीजन प्रधान पिंड 'जीवनवर्धक' कहे गये और कार्बन डाई आक्साइड प्रधान पिंड 'जीवनसंहारक' कहे गये। बृहस्पति ग्रह ही जीवनवर्धक पिंडों और तत्वों का सर्वप्रधान केन्द्र है। शनि ग्रह को जीवनसंहारक तत्वों का खजाना कहा गया। सूर्य का द्वादशांश छोड़ दें, तो शेष भाग जीवनवर्धक है। सूर्य पर दिखता काला धब्बा ही वह हिस्सा है, जिसे जीवन संहारक कहा जाता है। अमावस्या के निकट काल में जब चन्द्रमा क्षीण हो जाता है, तब संहारक प्रभाव डालता है। शेष दिनों में.. खासकर अपने पूर्णिमा के दिनों में चंद्रमा जीवनवर्धक होता है। शुक्र सौम्य होने के बावजूद संहारक है। अतैव इसे आसुरी शक्ति का पुरोधा कहा जाता है। मंगल रक्त और बुद्धि दोनों पर प्रभाव डालता है। बुध उभय पिंड है, जिस ग्रह का प्रभाव अधिक होता है, बुध उसके अनुकूल ही प्रभाव डालता है। छाया ग्रह राहु-केतु तो सदैव ही जीवन संहारक यानी कार्बन डाइ आक्साइड से भरे पिंड हैं। इनसे जीवन की अपेक्षा करना बेकार है।

अलग-अलग ग्रह अलग-अलग राशियों के स्वामी हैं। अतः जीवनवर्धक ग्रहों का प्रधान बृहस्पति जब-जब संहारक ग्रह की राशि में प्रवेश कर जीवनसंहारक तत्वों में रुकावट पैदा करता है; ऐसे संयोग शुभ तिथियां मानी गईं।

ऐसे चक्र में एक समय ऐसा आता है, ऑक्सीजन प्रधान पिंड 'बृहस्पति' जीवन संहारक प्रधान ग्रह शनि की खास राशि कुंभ में प्रवेश करता है तथा सूर्य और चन्द्रमा मंगल की राशि मेष में आ जाते हैं। तब इनके प्रभाव का केन्द्र-बिन्दु **हरिद्वार** बनता है। यह समय हरिद्वार में कुंभ पर्व का समय माना जाता है।

इसी प्रकार जब बृहस्पति ग्रह दैत्यगुरु शुक्र की राशि वृष में प्रवेश करता है तथा सूर्य और चन्द्रमा का शनि की मकर राशि में प्रवेश होता है। ऐसे समय **इलाहाबाद** प्रभाव बिन्दु बनता है। तब **प्रयाग** में कुंभ होता है। याद रहे कि यही वह तिथि होती है, जब सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण होता है। सूर्य का उत्तरायण होना कर्मकाण्ड की दृष्टि से शुभ माना जाता है।

जब भादों की भयानक धूप होती है, तब सूर्य के मारक प्रभाव से बचाने के लिए बृहस्पति सूर्य की राशि सिंह में प्रवेश करता है। इस समय जब तक सूर्य चन्द्र सहित सिंह राशि पर बना रहता है.... तब तक **नासिक** इसका केन्द्र बिन्दु होता है और वहां गोदावरी तीरे कुंभ पर्व की तरह मनाया जाता है।

जब बृहस्पति सिंहस्थ हो, सूर्य मंगल की मेष राशि में हो और चन्द्रमा शुक्र की राशि तुला में पहुंच जाये, तो महाकाल का पवित्र क्षेत्र - **उज्जैन** प्रभाव बिन्दु बनता है और शिप्रा किनारे कुंभ का मेला लगता है।

कुंभ का सिद्धान्त

मेरा मन आस्था और विज्ञान के इस उत्तर से संतुष्ट नहीं हुआ। मैंने धर्माचार्यो से चर्चा की, कल्पवासियों के बीच बैठा, अनुभवों को टटोला, तब एक बात समझ में आयी कि भारत में लम्बे समय से समाज को अनुशासित करने के लिए बनाई गयी वैज्ञानिक रीति-नीति को धर्म..पाप..पुण्य और मर्यादा जैसी आस्थाओं से जोड़ा जाता रहा है। समाज को विज्ञान की जटिलताओं में उलझाने की बजाय, आस्था की सहज, सरल और छोटी पगडंडी का मार्ग अपनाया गया।

अतः पुराण की मानें तो भी और विज्ञान की मानें तो भी.....जब-जब देवताओं अर्थात् जीवनवर्धक रचनात्मक शक्तियों द्वारा आसुरी शक्तियों अर्थात् जीवनसंहारक यानी नकारात्मक तत्वों के दुष्प्रभाव को रोकने की कोशिश की गई, तब-तब का समय व कोशिश कुंभ नाम से विख्यात हुआ। सम्भव है कि ऐसे शुभ कर्मों को निरंतरता देने के लिए समाज के नियन्ताओं ने इसे नियमित कर्म का रूप दे दिया और जो-जो स्थान इन कोशिशों का केन्द्र-बिन्दु बने, वे कुंभ पर्व का स्थान हो गये। अथर्ववेद में विश्व को ही 'घट' रूप के रूप में कल्पित किया गया है। नकारात्मक शक्तियां विश्व की आसुरी कृत्यों का प्रतीक हो गईं और दैव शक्तियां बुरे कामों...बुरे प्रभावों को रोकने वाली ताकत के रूप में कल्पित की गईं। समाज में हमेशा से ये दो तरह की शक्तियां रही ही हैं। आस्था और विज्ञान दोनों का आकलन करे, तो कौन इन्कार करेगा कि अच्छी ताकतों द्वारा बुरी ताकतों को रोकने की कोशिश और इसके लिए एकजुट होने की परिपाटी ही कुंभ है। मैं कुंभ को इसी रूप में देखता हूं।

अनुभव बताता है कि जब समृद्धि आती है, तो वह सदुपयोग का अनुशासन तोड़कर उपभोग का लालच भी लाती है और वैमनस्य भी। ऐसे में भविष्य का पूर्वाभास व कुछ सावधान मन ही रास्ता दिखाते हैं। ऐसे में जीवनवर्धक शक्तियों को जागृत होना पड़ता है। वे आपस में एकजुट होकर विचार-विमर्श करती हैं। समाधान खोजती हैं और अन्ततः गलत कामों को रोक देती हैं.. अच्छे कामों को आगे बढ़ाती हैं।

कुंभ का व्यवहार

गंगा, गोदावरी, शिप्रा... ये सदियों से समृद्ध नदियां रही हैं। इस समृद्धि के आने पर इनके तट पर खेती करने वाले किसानों के मन में लालच आया, तो खेती खेत से उतरकर नदियों के पाट पर चली आई; जैसा कि आज भी सब जगह दिखाई देता है। सोचना चाहिए कि नदी और भूमि दोनों को मां का दर्जा यूं ही नहीं दिया गया। दोनों ही पालक-पोषक हैं। अतः दोनों ही मां हैं। कभी इसी समाज ने इनके साथ व्यवहार के सिद्धांत तय किये थे। किन्हीं खास महीनों में भूमि को गर्भवती माना जाता था। इन महीनों में जुताई और खुदाई प्रतिबन्धित रहती है। नदी मां है, इसलिए इसमें मलमूत्र -

गंदगी का त्याग वर्जित है। ये पूजनीया हैं। नदी को पूजनीया मानने वाला समाज भला मां के वक्षस्थल पर हल चलाने की इजाजत कैसे दे सकता था? यही हुआ।

नदी पाट पर खेती को लेकर विवाद बढ़ा। समाज ने ऋषियों को नदियों की पवित्रता और सुरक्षा की पहरेदारी सौंपी थी। ऋषि प्रकृति का प्रतिनिधित्व करता है। समाज ऋषियों के पास गया। ऋषियों ने कहा कि नदी अकेले न समाज की है, न ऋषियों की..... यह तो सभी की साझा है। राज-समाज-ऋषि और प्रकृति के जीव-वनस्पति सभी का इस पर साझा अधिकार है। अतः इसकी समृद्धि और पवित्रता कायम रखने के लिए सभी को बैठकर निर्णय करना होगा। बस ! एक दस्तूर बन गया और राज-समाज और ऋषि-संत.... सभी निश्चित अवधि.... अंतराल पर नदी किनारे जुटने लगे। आज भी समाज किसी न किसी नाम से साल में कई बार अपनी-अपनी नदियों के किनारे जुटता ही है। कहीं इसका कारण छठ पूजा है, तो कहीं वसंतपंचमी, पोंगल और कहीं माघ तथा श्रावणी मेला। ऐसा माना जाता है कि कोई भी नदी करीब 150 बरस में अपनी धारा की दिशा और दशा में बदलाव का रुख करती है। सम्भवतः इसीलिए 144 बरस में महाकुंभ का निर्णायक आयोजन तय किया गया। महाकुंभ के निर्णयों की अनुपालना और निगरानी के लिए हर छह बरस पर अर्धकुंभ और बारह बरस पर कुंभ के आयोजन की परम्परा बनी।

कुंभ के वाहक

यह सच है कि भारत में जब-जहां संकट दिखा..... कोई पुरुष, घटना या संदर्भ प्रेरक प्रतीक बनकर खड़ा हो गया.. जीवनवर्द्धक शक्ति बन गया। इतिहास के पन्नों पर निगाह डालें तो राजा, प्रजा और ऋषि.... तीनों कहीं न कहीं अपने-अपने वर्ग के समक्ष प्रेरणा का प्रतीक बनकर खड़े दिखाई देते हैं। जो कुंभ का अभिप्राय कभी न भूले ; जिन्होंने कुंभ के विमर्श को कभी नहीं नकारा, कुंभ के वाहक बने ; जो राज-समाज और ऋषि अपनी भूमिका को कभी न भूले, समाज ने उन्हें हमेशा याद रखा। बरस-दो बरस नहीं, हजारों बरस बाद भी।

जब उत्तर के मैदान में पानी का संकट था, तब **राजा भागीरथ** प्रतीक बने। राजा सगर के पुत्रों के रूप में 60 हजार की आबादी का कल्याण राजा भागीरथ के यश के कारण बना।

मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और कर्नाटक के वर्तमान नामकरण वाले इलाकों में जब कभी पानी संकट हुआ तो **गौतम नामक एक ब्राह्मण** प्रतीक बन सामने आया और गोदावरी जैसी महाधारा बह निकली। ब्रह्मपुराण में इस प्रसंग का जिक्र करते हुए गोदावरी को गंगा का ही दूसरा स्वरूप कहा गया है। विन्ध्य गिरि पर्वतमाला के उत्तर में बहने वाली गंगा.... भागीरथी कहलाई और दक्षिण की ओर बहने वाली गंगा.... गोदावरी नाम से विख्यात हुई। इसे गौतमी गंगा भी कहा जाता है।

स्कन्दपुराण में वर्तमान आन्ध्रप्रदेश कभी नदीहीन क्षेत्र के रूप उल्लिखित है। दक्षिण के इस संकट में एक ऋषि का पौरुष प्रतीक बना। **ऋषि अगस्त्य** के प्रयास से ही आकाशगंगा दक्षिण की धरा पर अवतरित होकर सुवर्णमुखी नदी के नाम से एक जीवनदायी धारा बन गई। भगीरथ-एक राजा, गौतम-एक प्रजा तथा अगस्त्य-एक ऋषि.... तीनों ही नदी के अविरल प्रवाह के उत्तरदायी, तीनों ही रचना के प्रतीक ! सचमुच ! कभी भारत में नदियों की समृद्धि में सभी साझेदार थे। हर भारतवासी के लिए उसकी अपनी नदी गंगा जैसी ही थी। वह उसे पूजनीया मानता था। यूं भी जहां गंगा नहीं है, वहां कावड़ियों के कन्धे पर सवार होकर पहुंचती ही है।

जब

समृद्धि आती है, तो वह सदुपयोग का अनुशासन तोड़कर उपभोग का लालच भी लाती है और वैमनस्य भी। ऐसे में भविष्य का पूर्वाभास व कुछ सावधान मन ही रास्ता दिखाते हैं। ऐसे में जीवनवर्धक शक्तियों को जागृत होना पड़ता है। वे आपस में एकजुट होकर विचार-विमर्श करती हैं। समाधान खोजती हैं और अन्ततः गलत कामों को रोक देती हैं.. अच्छे कामों को आगे बढ़ाती हैं। ये जीवनवर्धक शक्ति आप भी हो सकते हैं..।

कुंभ का वर्तमान

भूल गये अभिप्राय

दरअसल भारत में कुंभ की गौरवशाली परम्परा का अभिप्राय प्रकृति संरक्षण ही था, लेकिन अफसोस! समय के साथ कुंभ के स्नानार्थी कुंभ का अभिप्राय भी भूल गये और कर्तव्य भी। नतीजा ? आज कुंभ की नदियां न आचमन के योग्य हैं और न ही इन्हें पवित्रता की देवी कहा जा सकता है। गंगा, गोदावरी, शिप्रा.... सभी प्रदूषण, शोषण और अतिक्रमण से त्रस्त हैं। अपने को गंगा की संतान कहने वाले स्नानार्थी कुंभ में इकठ्ठे होते हैं; नदी के मलीन जल में स्नान और आचमन की औपचारिकता पूरी करते हैं; राज-प्रशासन व्यवस्था देता है और संत भी शाही स्नान के नाम पर पहली डुबकी लगाकर इतिश्री कर लेते हैं ? क्या किसी के मन में एक बार भी यह विचार नहीं आता कि हम जिसे मां कहते हैं.... जो कभी श्वेत, शुभ्र, धवल.... और सचमुच अमृतमयी थी..... उसे मैली, बीमार, शोषित व कचरा ढोने वाली रेल में हमने ही बदला है ? क्या किसी को गंगा, गोदावरी और शिप्रा जैसी हीन-मलीन हो चुकी पवित्र नदियों की पुकार नहीं सुनाई देती ? क्या हम सभी भूल गए हैं कि ये हमारी संस्कृति व प्रकृति की ही नहीं.... समृद्धि की भी महाधारायें हैं ?

मुझे भारत की 144 नदियों को देखने का मौका मिला है। मुझे यह कहते लज्जा आती है कि आज वर्ष 2008 में भारत की एक भी प्रमुख नदी ऐसी नहीं है, जिसका जल स्वच्छता के मानदंडों पर खरा और सीधे पीने योग्य हो। नदियों की ऐसी दुर्दशा वाले भारत में ऐसी सामाजिक आस्था के कोई मायने नहीं है कि जो नदियों का जीवन न बचा सके। नदियों पर प्रदूषण का बड़ा खतरा तो लम्बे अरसे से था ही, अब अतिक्रमण और शोषण की बुरी नीयत भी सामने आ गई है। ये ही आज की नकारात्मक शक्तियां हैं। निजी प्रमुख हो गया है, सामुदायिक व सर्वकल्याणकारी कुछ नहीं। ऐसी स्थिति में किसी एक को दोष देने या हाथ पर हाथ धरकर चुप बैठने से काम चलने वाला नहीं। अब तो आफत शिंकजा कस चुकी है। यदि अब भी हम नहीं चेते, तो नदियां तो जायेंगी ही.... हम भी जायेंगे और भारत की समृद्धि व गौरव भी।

कुंभ का निवेदन

वापस लौटे समाज

जरूरत है कि हम अपनी स्थानीय नदी को 'गंगा' ही मानकर संरक्षण व उन्नयन में लगें। हमें कुंभ के मूल अभिप्राय व लक्ष्य को पुनः प्राप्त करना होगा। हमें अपने राज-समाज और संत सभी को याद दिलाना होगा कि अब जब भी.... जहां भी नदी किनारे समाज जुटे, वहां अपनी आस्था के दीप तो जलायें, लेकिन नदी के प्रवाह की अविरलता, स्वच्छता और सुंदर स्वरूप को सुनिश्चित करने का संकल्प लेना न भूलें। अब छठ पूजा, माघ-श्रावणी मेला, कुंभ और कावड़ियों की कलश यात्रायें, नदियों का संरक्षण और समृद्धि हेतु सुनिश्चित कदम उठाने का माध्यम बने। भारत में जल के विकेन्द्रीकृत जल प्रबन्धन का जो समयसिद्ध ज्ञान है, वह इसी रास्ते समृद्ध होकर पुनः समाधान सुझा सकता है। वैश्विक समस्याओं के स्थानीय समाधान प्रस्तुत करने का यही एक रास्ता है। जो जहां है.... वहां की समझ, शक्ति और संगठन को नदी किनारे के इन कुंभों से जोड़कर एक ताकत खड़ी करें; ताकि पूर्व की तरह कुंभ के निर्णय सर्वमान्य बनें। फिर उन निर्णयों की अनुपालना व निगरानी की सतत व्यवस्था बनानी होगी। राज-समाज और संत सभी जिम्मेदार बनें। सभी अपनी-अपनी भूमिका तलाश कर उसके निर्वाह के प्रति जवाबदेह हों। यह बात मन को उत्साहित भी करती है, तो मन में एक सवाल भी उठाती है कि.....

यह हो कैसे ?

जब यह सवाल उठता है, तब अलवर की पुनर्जीवित नदी अरवरी और सत्तर गांवों का संगठन-अरवरी संसद मेरे सामने आ खड़े होते हैं। अरवरी नदी भी कभी सूख गई थी.... आज सदानीरा है। जब अरवरी समृद्ध और सदानीरा हुई, तो यहां भी लालच आया। राज में भी और समाज में भी। राज ने मछली का टेंडर खोल दिया और समाज अधिक पानी की फसल पाने को लालायित हो उठा। इसी समाज में कुछ समझदार लोग थे, जिन्होंने भविष्य देख लिया था। वे चेत गये। अरवरी के सत्तर गांव एक साथ बैठे। नदी सदा-सदानीरा और समृद्ध बनी रहे, इसके लिए

उपयोग का अनुशासन बनाया। नियम बने और उनकी पालना भी सुनिश्चित हुई। राज के लालच पर भी रोक लगी। ठेका रद्द हो गया। आज भी अरवरी के सत्तर गांव वर्ष में दो बार अपनी नदी के किनारे एक साथ बैठते हैं। नदी और इसके आस-पास की हरियाली, जीव व प्रकृति की समीक्षा करते हैं और फिर... पुनः अपने काम में जुट जाते हैं; यह भाव लिए कि नदी, जंगल, पहाड़, पानी समृद्ध रहेंगे, तो उनकी समृद्धि में भी कोई कमी नहीं आयेगी। अरवरी आज उनका तीर्थ है और अरवरी संसद की हर बैठक एक कुंभ ! अरवरी के 70 गांव मुझे ताकत देते हैं, लेकिन भारत में हर जगह का समाज ऐसा ही हो.... यह उम्मीद करना बेमानी है। हां! इस बात पर मुझे सदैव यकीन रहा है कि कोशिश और नीयत अच्छी हो, तो नतीजा आता ही है। क्योंकि हर जगह राज-समाज-संत.... सभी के बीच कुछ अच्छे लोग मिल ही जाते हैं। प्रकृति भी आपकी मदद करती है। मन ने कहा कि इन अच्छी ताकतों को एकजुट कर लिया जाये, तो रास्ता निकलेगा ही।

इसी संकल्प के साथ पिछले एक वर्ष के दौरान गोमती-गंगा-यमुना-सरयू-सई-लूणी-गार्वी..... कई नदियों की पवित्रता और अविरलता सुनिश्चित करने के लिए जहां उम्मीद दिखी, हम वहां गये... सम्पर्क साधा... बात की... संघर्ष किया। राज-समाज और संत.... तीनों को एक साथ बैठाने की एक छोटी सी कोशिश 28-29-30 जुलाई 2008 को नई दिल्ली में की। विश्वास और पुख्ता हुआ। दो कदम और आगे बढ़े। इसी रास्ते पर चलते हुए कुंभ के मूल अभिप्राय और लक्ष्य का अहसास जगाने का संकल्प और पक्का हुआ। इसी प्रयोजन से हमने अब नदी संरक्षण के लिए एक साथ मिल बैठने के आयोजन को 'जल कुंभ' का नाम देना तय किया है।

जल कुंभ कहां हो ?

यह प्रश्न हमारे सामने भी था, तो नीति वाक्य याद आया।

''संकट में रोशनी भी वहीं से मिलती है.... जहां कभी अंधेरा गहरा हो।'' अतः अंधेरा कितना ही गहरा हो, अंधेरा होने पर न रोयें.... न चिल्लायें.... बस! एक छोटा सा दीप जलायें। तब ऐसा हर इलाका तीर्थ बन जायेगा। वहां आप अमृत धारा और कुंभ दोनों की स्थापना व आराधना कर सकेंगे।

जलकुंभ अभिप्राय

- कुंभ परम्परा को पुनर्जीवित करने की जरूरत व मूल अभिप्राय को ज्यादा से ज्यादा लोगों के बीच चर्चा का विषय बनाना।
- 'गंगा को राष्ट्रीय नदी के प्रतीक के रूप में संवैधानिक मान्यता व संरक्षण की मांग तथा संकल्प।
- भारतीय नदियों को प्रदूषण-शोषण-अतिक्रमण मुक्त बनाने हेतु वातावरण निर्माण प्रक्रिया को गतिशील बनाना।
- सहयोगी अनुभवों का आदान-प्रदान।
- पानी-जीव-हरियाली के समक्ष पेश चुनौतियां व समाधान के प्रति जागृति एवं जिम्मेदारी तय कर उसमें भागीदार होना।
- नदियों की पवित्रता बनाये रखने सम्बन्धी सर्वधर्म विशेष के दायित्व की जरूरत, उपाय व व्यवस्था पर संवाद कायम करना।

जलबिरादरी

34/46, किरण पथ, मानसरोवर, जयपुर -302020, फोन न. .141-2393178

ई-मेल : watermantbs@yahoo.com - jalpurushtbs@gmail.com

नदी लोकादेश

1. राष्ट्रीय ध्वज, पशु-पक्षी आदि प्रतीक की भांति 'गंगा-एक राष्ट्रीय नदी प्रतीक' के रूप में संवैधानिक तौर पर मान्य एवम् संरक्षित हो। प्रदेश भी अपनी एक मुख्य नदी को 'प्रादेशिक नदी' के रूप में घोषित एवम् संरक्षित करें।

2. केन्द्र व प्रदेश क्रमशः अपनी राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक नदी नीति बनायें।

3. नदियों के भू-उपयोग व स्वामित्व में कभी... किसी भी प्रकार का परिवर्तन वैधानिक तौर पर मान्य न हो।

4. प्रत्येक नदी विशेष हेतु विशेष पारिस्थितिकीय प्रवाह के मानक निर्धारित हों और हर स्थिति में उनकी पालना सुनिश्चित करने की व्यवस्था बने।

5. नदी प्रदूषण नियंत्रण हेतु सरकार, स्थानीय समुदाय, पंचायत, नगरपालिका व स्वयंसेवी संगठनों के प्रतिनिधियों को जोड़कर नदीवार निगरानी इकाइयों का गठन एवम् उन्हें कार्रवाई के वैधानिक अधिकार दिए जाएं।

6. नदियों के प्रदूषण-नियंत्रण की जवाबदेही तय करें। जल प्रदूषण से होने वाली बीमारी व मौतों के मामलों को न सिर्फ प्रदूषकों, बल्कि प्रदूषण नियंत्रण हेतु जवाबदेह नियंत्रण तंत्र के खिलाफ भी दीवानी

अदालतों में मुकदमा चलाने का प्रावधान हो। आखिरकार किसी की हत्या करने वाला सिविल कोर्ट में सिर्फ जुर्माना भरकर कैसे बच सकता है?

7. नदी में मैला डालना एक बड़ा प्राकृतिक अपराध है। अत: यह सुनिश्चित हो कि ग्राम पंचायतें, नगर निगम व पालिका अपने सीवेज कचरे को नदी में कदापि न डालें। पूरे देश में जल शोधन की एक जैसी प्रणाली कारगर नहीं हुई है। अत: स्थानीय परिस्थिति के अनुसार स्थानीय समाधान व संसाधन को प्रथमिकता दें।

8. प्रत्येक नदी के सर्वोपरि बाढ़ बिन्दु के दोनों ओर कम से कम 100 मी. चौड़े क्षेत्र को व्यापक स्तर पर हरी घास तथा स्थानीय जैवविविधता का सम्मान करने वाली वनस्पति के सघन क्षेत्र के रूप में संरक्षित एवम् संवर्द्धित किया जाए।

9. सरकार जनसहमति से नदियों के ऊपरी, मध्य व निचले छोरों में पानी की प्रकृति व उपलब्धता के अनुसार बसावट, उद्योग व खेती की सीमा व प्रकार का निर्धारण करे।

10. सरकार देश की आर्थिक व ऊर्जा की सारी जरूरतों को पूरा करने के लिए सिर्फ 'सेज़' और 'जल विद्युत' पर पूरा जोर लगाने की बजाय, विकास व ऊर्जा के अन्य विकल्पों को भी बराबर तवज्जो दे तथा तदानुसार निवेश बढ़ाये।

राष्ट्रीय नदी संरक्षण सत्याग्रह सम्मेलन, नई दिल्ली
दिनांक - 28-29-30 जुलाई, 2008 को जल बिरादरी द्वारा जारी।

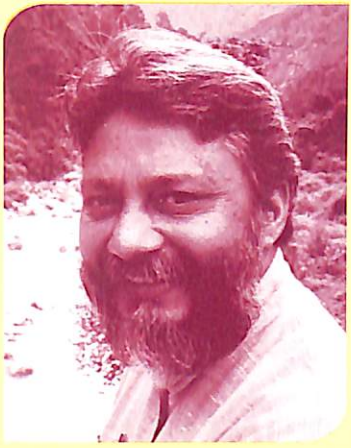

राजस्थान के समाज के साथ मिलकर उसकी श्रमनिष्ठा और समझ से 8,600 से अधिक जल संरचनाओं के सफल निर्माण व प्रबन्धन के परिणामस्वरूप अरवरी, सरसा, भगाणी, रूपारेल, जहाजवाली, महेश्वरा और साबी..... सात नदियों के पुनर्जीवन का गौरव लेखक के हिस्से में है। इस सफलता ने न सिर्फ जोहड़ जैसी देशी जलसंरचनाओं को अंतर्राष्ट्रीय ख्याति दी, बल्कि सदियों के अनुभवों पर जाचे-परखे पानी और पर्यावरण के परम्परागत भारतीय ज्ञान को अंतरराष्ट्रीय मान्यता भी दिलाई। आपका काम व नदी संसद जैसे संगठन इस बात का प्रमाण है कि कैसे जल स्वावलम्बन के जरिये ग्राम स्वावलम्बन हासिल किया जा सकता है।

पानी के संरक्षण के लिए अपना जीवन अर्पण करने तथा एक प्रेरक-शक्ति के रूप में ख्याति के कारण आपको जलपरुष, जलगांधी और जोहड़ वाला बाबा जैसे उपनामों से नवाजा गया। आपको सामुदायिक नेतृत्व विकास के लिए एशिया का नोबेल पुरस्कार कहे जाने वाले 'रमन मेगासायसाय पुरस्कार-2001' से सम्मानित किया गया।

लेखक का विश्वास है कि भारत के परम्परागत ज्ञान व कौशल के जरिये ही हम भारत की नदी, जंगल व प्रकृति की समृद्धि को पुनः हासिल कर सकते हैं। इसी अटल विश्वास के साथ आपने भारतीय समाज को नदी प्रबन्धन की 'कुंभ' जैसी महत्वपूर्ण भारतीय परम्परा के मूल अभिप्राय व लक्ष्य से जोड़ने का बीड़ा उठाया है। यह पुस्तिका इसी दिशा में उठा एक कदम है।

श्री राजेंद्र सिंह.. तरुण भारत संघ एवं राष्ट्रीय जल बिरादरी के अध्यक्ष तथा जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द जी महाराज की पहल पर गठित 'गंगा सेवा अभियान' के संयोजक हैं।

संपर्क : 34/46, किरणपथ, मानसरोवर, जयपुर-302020 फोन : 0141-2393178

हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे
हर हर गंगे

जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे
जय जय गंगे

गङ्गासेवाअभियान ने गङ्गा की पवित्रता और आध्यात्मिकता को बचाने हेतु देशभर में गङ्गासंवाद शुरु किया है । इसी संवाद के अन्तर्गत **'सिर्फ स्नान नहीं है कुम्भ'** नामक पुस्तक जो कि भारतीय संस्कृति की समृद्ध परम्परा का परिचय कराती है । भारत की अध्यात्मिक समृद्धि और जीवन जीने की पद्धति को सबके धारण करने योग्य बनाने वाले तत्त्वों की प्रकाशक एवं विवादों के समाधान के रास्ते खोजने की अमृत कथा है । इस अमृत की विजय वाली परम्परा को पुनः अपने परम्परागत स्वरूप में लाने का अभिक्रम भी है । इस हेतु गङ्गासेवाअभियान के संयोजक **राजेन्द्र सिंह** ने इस पुस्तक को लिखा है। यह पुस्तक भारतीय ज्ञान-परम्परा को पुनर्जीवित करके गङ्गा को अविरल और शुद्ध, सदानीरा, निर्मल, भारत की जीवनधारा बनायेगी। इसे पढ़ने वाले भारतीयकुम्भपरम्परा को पुनर्जीवित करने में जुटेंगे ।

यह पुस्तक एक तरफ कुम्भ का इतिहास बताती है तो दूसरी तरफ गङ्गा नदी में केवल स्नान नहीं बल्कि गङ्गा माँ की पवित्रता बनाये रखने का दायित्वबोध कराती है ।

स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती
जगद्गुरु शङ्कराचार्य, ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं द्वारकाशारदापीठाधीश्वर

अँधेरा होने पर न रोयें ... न चिल्लायें

बस! एक छोटा सा गङ्गादीप जलायें ।
निर्मल गङ्गा... अविरल गङ्गा बनायें ।।